9

# द्रोणाचार्य

0751CH09

आचार्य द्रोण महर्षि भरद्वाज के पुत्र थे। पांचाल-नरेश का पुत्र द्रुपद भी द्रोण के साथ ही भरद्वाज-आश्रम में शिक्षा पा रहा था। दोनों में गहरी मित्रता थी। कभी-कभी राजकुमार द्रुपद उत्साह में आकर द्रोण से यहाँ तक कह देता था कि पांचाल देश का राजा बन जाने पर मैं आधा राज्य तुम्हें दे दूँगा। शिक्षा समाप्त होने पर द्रोणाचार्य ने कृपाचार्य की बहन से ब्याह कर लिया। उससे उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम उन्होंने अश्वत्थामा रखा। द्रोण अपनी पत्नी और पुत्र को बड़ा प्रेम करते थे।

द्रोण बड़े गरीब थे। वह चाहते थे कि धन प्राप्त किया जाए और अपनी पत्नी व पुत्र के साथ सुख से रहा जाए। उन्हें खबर लगी कि परशुराम अपनी सारी संपत्ति गरीब ब्राह्मणों को बाँट रहे हैं, तो भागे-भागे उनके पास गए, लेकिन उनके पहुँचने तक परशुराम अपनी सारी संपत्ति वितरित कर चुके थे और वन-गमन की तैयारी कर रहे थे। द्रोण को देखकर वह बोले—"ब्राह्मण-श्रेष्ठ! आपका स्वागत है। पर मेरे पास जो कुछ था, वह मैं बाँट चुका हूँ। अब यह मेरा शरीर और धनुर्विद्या ही है। बताइए, मैं आपके लिए क्या करूँ?"

तब द्रोण ने उनसे सारे अस्त्रों के प्रयोग तथा रहस्य सिखाने की प्रार्थना की। परशुराम ने यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और द्रोण को धनुर्विद्या की पूरी शिक्षा दे दी।

कुछ समय बाद राजकुमार द्रुपद के पिता का देहावसान हो गया और द्रुपद राजगद्दी पर बैठा। द्रोणाचार्य को जब द्रुपद के पांचाल देश की राजगद्दी पर बैठने की खबर लगी, तो यह सुनकर वह बड़े प्रसन्न हुए और राजा द्रुपद से मिलने पांचाल देश को चल पड़े। उन्हें गुरु के आश्रम में द्रुपद की लड़कपन में की गई बातचीत याद थी। सोचा, यदि आधा राज्य न भी देगा तो कम-से-कम कुछ धन तो ज़रूर ही देगा। यह आशा लेकर द्रोणाचार्य राजा द्रुपद के पास पहुँचे और बोले—"मित्र द्रुपद, मुझे पहचानते हो न? मैं तुम्हारा बालपन का मित्र द्रोण हूँ।"

ऐश्वर्य के मद में मत्त हुए राजा द्रुपद को द्रोणाचार्य का आना बुरा लगा और द्रोण का अपने साथ मित्र का-सा व्यवहार करना तो और भी अखरा। वह द्रोण पर गुस्सा हो गया और बोला—"ब्राह्मण, तुम्हारा यह व्यवहार सज्जनोचित

नहीं है। मुझे मित्र कहकर पुकारने का तुम्हें साहस कैसे हुआ? सिंहासन पर बैठे हुए एक राजा के साथ एक दरिद्र प्रजाजन की मित्रता कभी हुई है? तुम्हारी बुद्धि कितनी कच्ची है! लड़कपन में लाचारी के कारण हम दोनों को जो साथ रहना पड़ा, उसके आधार पर तुम द्रुपद से मित्रता का दावा करने लगे! दरिद्र की धनी के साथ, मूर्ख की विद्वान के साथ और कायर की वीर के साथ मित्रता कहीं हो सकती है? मित्रता बराबरी की हैसियतवालों में ही होती है। जो किसी राज्य का स्वामी न हो, वह राजा का मित्र कभी नहीं हो सकता।" द्रुपद की इन कठोर गर्वोक्तियों को सुनकर द्रोणाचार्य बड़े लज्जित हुए और उन्हें क्रोध भी बहुत आया। उन्होंने निश्चय किया कि मैं इस अभिमानी राजा को सबक सिखाऊँगा और बचपन में जो मित्रता की बात हुई थी, उसे पूरा करके चैन लूँगा। वह हस्तिनापुर पहुँचे और वहाँ अपनी पत्नी के भाई कृपाचार्य के यहाँ गुप्त रूप से रहने लगे।

एक रोज़ हस्तिनापुर के राजकुमार नगर से बाहर कहीं गेंद खेल रहे थे कि इतने में उनकी गेंद एक कुएँ में जा गिरी। युधिष्ठिर उसको निकालने का प्रयत्न करने लगे, तो उनकी अँगूठी भी कुएँ में गिर पड़ी। सभी राजकुमार कुएँ के चारों ओर झाँक-झाँककर देखने लगे, पर उसे निकालने का उपाय उनको नहीं सूझता था। एक कृष्ण वर्ण का ब्राह्मण मुसकराता हुआ यह सब चुपचाप देख रहा था। राजकुमारों को उसका पता नहीं था। राजकुमारो को अचरज में डालता हुआ वह बोला—"राजकुमारो! बोलो, मैं गेंद निकाल दूँ, तो तुम मुझे क्या दोगे?"

"ब्राह्मणश्रेष्ठ! आप गेंद निकाल देंगे, तो कृपाचार्य के घर आपकी बढ़िया दावत करेंगे।" युधिष्ठिर ने हँसते हुए कहा। तब द्रोणाचार्य ने पास में पड़ी हुई सींक उठा ली और उसे पानी में फेंका। सींक गेंद को ऐसे जाकर लगी, जैसे तीर और फिर इस तरह लगातार कई सींकें वे कुएँ में डालते गए। सींकें एक-दूसरे के सिरे से चिपकती गईं। जब आखिरी सींक का सिरा कुएँ के बाहर तक पहुँच गया, तो द्रोणाचार्य ने उसे पकड़कर खींच लिया और गेंद निकल आई। सब राजकुमार आश्चर्य से यह करतब देख रहे थे। उन्होंने ब्राह्मण से विनती की कि युधिष्ठिर की अँगूठी भी निकाल दीजिए।

द्रोण ने तुरंत धनुष चढ़ाया और कुएँ में तीर मारा। पलभर में बाण अँगूठी को अपनी नोंक में लिए हुए ऊपर आ गया। द्रोणाचार्य ने अँगूठी युधिष्ठिर को दे दी। यह चमत्कार देखकर राजकुमारों को और भी ज़्यादा अचरज हुआ। उन्होंने द्रोण के आगे आदरपूर्वक सिर नवाया और हाथ जोड़कर पूछा—"महाराज! हमारा प्रणाम स्वीकार कीजिए और हमें अपना परिचय दीजिए कि आप कौन हैं? हम आपकी क्या सेवा कर सकते हैं? हमें आज्ञा दीजिए।"

द्रोण ने कहा—"राजकुमारो! यह सारी घटना सुनाकर पितामह भीष्म से ही मेरा परिचय प्राप्त कर लेना।"

राजकुमारों ने जाकर पितामह भीष्म को सारी बात सुनाई, तो भीष्म ताड़ गए कि हो-न-हो वे सुप्रसिद्ध आचार्य द्रोण ही होंगे। यह सोचकर उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब से राजकुमारों की अस्त्र-शिक्षा द्रोणाचार्य के ही हाथों पूरी कराई जाए। बड़े सम्मान से उन्होंने द्रोण का स्वागत किया और राजकुमारों को आदेश दिया कि वे गुरु द्रोण से ही धनुर्विद्या सीखा करें। कुछ समय

बाद जब राजकुमारों की शिक्षा पूरी हो गई, तो द्रोणाचार्य ने उनसे गुरु–दक्षिणा के रूप में पांचालराज द्रुपद को कैद कर लाने के लिए कहा। उनकी आज्ञानुसार पहले दुर्योधन और कर्ण ने द्रुपद के राज्य पर धावा बोल दिया, पर पराक्रमी द्रुपद के आगे वे न ठहर सके। हारकर वापस आ गए। तब द्रोण ने अर्जुन को भेजा। अर्जुन ने पांचालराज की सेना को तहस–नहस कर दिया और राजा द्रुपद को उनके मंत्री सहित कैद करके आचार्य के सामने ला खड़ा किया।

द्रोणाचार्य ने मुसकराते हुए द्रुपद से कहा–"हे वीर! डरो नहीं। किसी प्रकार की विपत्ति की आशंका न करो। लड़कपन में तुम्हारी–हमारी मित्रता थी। साथ–साथ खेले–कूदे, उठे–बैठे। बाद में जब तुम राजा बन गए, तो ऐश्वर्य के मद में आकर तुम मुझे भूल गए और मेरा अपमान किया। तुमने कहा था कि राजा ही राजा के साथ मित्रता कर सकता है। इसी कारण मुझे युद्ध करके तुम्हारा राज्य छीनना पड़ा। परंतु मैं तो तुम्हारे साथ मित्रता ही करना चाहता हूँ। इसलिए आधा राज्य तुम्हें वापस लौटा देता हूँ, क्योंकि मेरा मित्र बनने के लिए भी तो तुम्हें राज्य चाहिए न! मित्रता तो बराबरी की हैसियतवालों में ही हो सकती है।"

द्रोणाचार्य ने इसे अपने अपमान का काफ़ी बदला समझा और उन्होंने द्रुपद को बड़े सम्मान के साथ विदा किया। इस प्रकार राजा द्रुपद का गर्व चूर हो गया, लेकिन बदले से घृणा दूर नहीं होती। किसी के अभिमान को ठेस लगने पर जो पीड़ा होती है, उसे सहन करना बड़ा

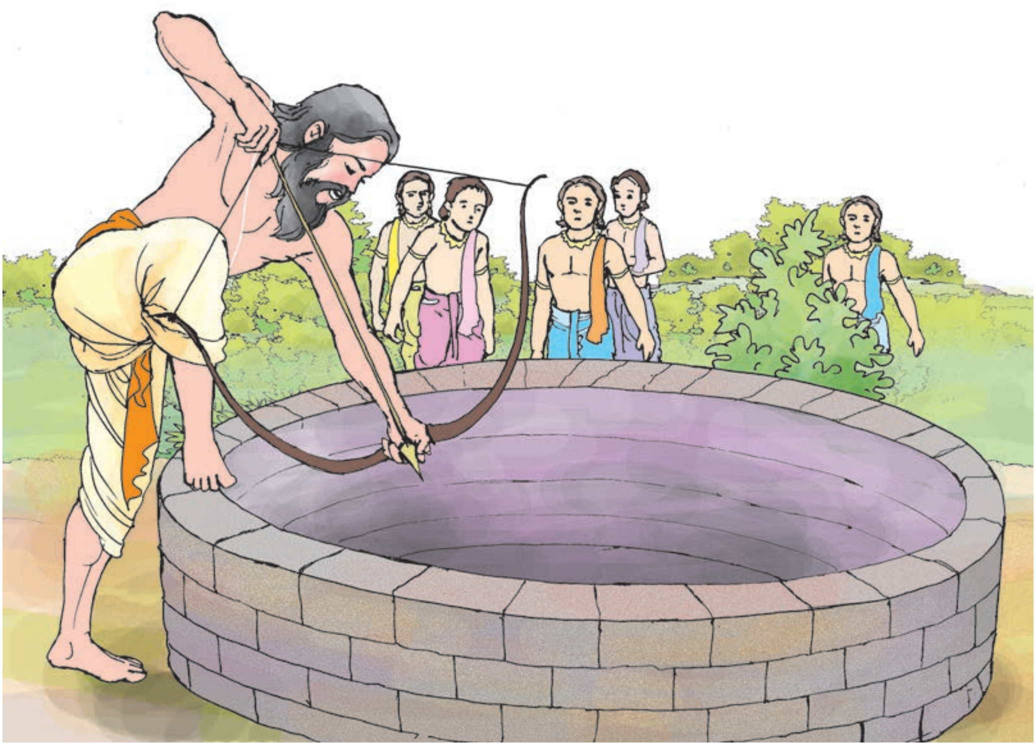

कठिन होता है। द्रोण से बदला लेने की भावना द्रुपद के जीवन का लक्ष्य बन गई। उसने कई कठोर व्रत और तप इस कामना से किए कि उसे एक ऐसा पुत्र हो, जो द्रोण को मार सके। साथ ही एक ऐसी कन्या हो, जो अर्जुन को ब्याही जा सके। आखिर उसकी कामना पूरी हुई। उसके धृष्टद्युम्न नामक एक पुत्र हुआ और द्रौपदी नाम की एक कन्या। आगे चलकर कुरुक्षेत्र की रणभूमि में अजेय द्रोणाचार्य इसी धृष्टद्युम्न के हाथों मारे गए थे।